The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Special Issue 1 | February 2026
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

भारतीय जीवन मूल्यों के सन्दर्भ में सतत विकास और पर्यावरणीय नैतिकता

डॉ0 सरोज नैय्यर

सहायक प्राध्यापक, शिक्षा संकाय, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.18798184

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 16-01-2026

Published: 05-02-2026

Keywords:

सतत विकास, भारतीय चिंतन, पर्यावरणीय नैतिकता, शिक्षा नीति *2020* , वसुधैव कुटुम्बकम्

ABSTRACT

आज के वैश्वीकरण, औद्योगिकीकरण और उपभोक्तावाद के युग में "सतत विकास" (Sustainable Development) मानव सभ्यता के अस्तित्व के लिए अत्यंत आवश्यक विषय बन गया है। आर्थिक प्रगति के साथ-साथ पर्यावरणीय असंतुलन, संसाधनों का क्षय और सामाजिक असमानता ने विकास के मॉडल पर पुनर्विचार की आवश्यकता उत्पन्न की है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रतिपादित सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) का उद्देश्य आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय आयामों में संतुलन स्थापित करना है। इस संदर्भ में भारत की सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक परंपरा एक समग्र दृष्टि प्रदान करती है। भारतीय चिंतन के अनुसार विकास केवल भौतिक वृद्धि नहीं, बल्कि मानव, समाज और प्रकृति के सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व पर आधारित होना चाहिए। "वसुधैव कुटुम्बकम्" और "सर्वे भवन्तु सुखिनः" जैसे भारतीय सिद्धांत वैश्विक एकता, करुणा और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व की भावना को सशक्त करते हैं। अहिंसा, अपरिग्रह, धर्म और समरसता जैसे भारतीय मूल्य सतत विकास के नैतिक आधार प्रदान करते हैं, जो संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग और पर्यावरण संरक्षण की दिशा में मार्गदर्शन करते हैं। भारतीय शिक्षा नीति 2020 में पर्यावरणीय जागरूकता और स्थायी जीवनशैली को शिक्षा के मूल तत्वों के रूप में सम्मिलित किया गया है, जिससे नागरिकों में पर्यावरणीय उत्तरदायित्व और स्थायी जीवन मूल्य विकसित हों। इसी प्रकार, "Lifestyle for Environment (LiFE)" जैसी पहलें

पर्यावरण-मित्र जीवनशैली को जन-आंदोलन का रूप दे रही हैं। निष्कर्षतः, भारतीय चिंतन और मूल्य प्रणाली सतत विकास के लिए एक संतुलित, नैतिक और मानव-केंद्रित दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। यह दर्शन विश्व को ऐसे मार्ग की ओर ले जाता है जहाँ आर्थिक उन्नति और पर्यावरण संरक्षण परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक शक्तियाँ हैं।

प्रस्तावना

आज के वैश्वीकरण और तीव्र औद्योगिकीकरण के युग में "सतत विकास" (Sustainable Development) मानव सभ्यता के अस्तित्व और भविष्य से जुड़ा हुआ एक अत्यंत गंभीर और प्रासंगिक विषय बन गया है। विज्ञान और तकनीकी प्रगति ने जहाँ एक ओर मानव जीवन को सुविधाजनक और समृद्ध बनाया है, वहीं दूसरी ओर इसने प्रकृति के संतुलन को भी गहराई से प्रभावित किया है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, उपभोक्तावाद और प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन ने पर्यावरणीय संकट की ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है, जिससे सम्पूर्ण पृथ्वी का पारिस्थितिक तंत्र खतरे में पड़ गया है। जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जल-प्रदूषण, ग्लेशियरों का पिघलना और जैव विविधता का नष्ट होना – ये सभी संकेत इस बात के हैं कि विकास की वर्तमान दिशा असंतुलित है। इस स्थिति में यह प्रश्न अत्यंत स्वाभाविक रूप से उठता है कि क्या विकास का अर्थ केवल आर्थिक वृद्धि, भौतिक संपन्नता और उपभोग के अवसरों की वृद्धि तक सीमित है, या फिर इसमें मानवीय उत्तरदायित्व, सामाजिक समानता और पर्यावरणीय संरक्षण भी शामिल होना चाहिए? संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (UNESCO, 2015) के अनुसार, सतत विकास का लक्ष्य केवल आर्थिक विकास नहीं बल्कि ऐसा समग्र विकास है, जो सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संरक्षण और सांस्कृतिक संतुलन को एक साथ लेकर चले। यह दृष्टिकोण आधुनिक युग की आवश्यकता है, क्योंकि यदि विकास प्रकृति के विरुद्ध होगा, तो मानव सभ्यता की निरंतरता ही संकट में पड़ जाएगी।

इस सन्दर्भ में भारत की सांस्कृतिक और दार्शनिक परंपरा विश्व के लिए एक गहरा मार्गदर्शन प्रदान करती है। भारतीय चिंतन हमें यह सिखाता है कि सच्चा विकास वह है जिसमें **मानव और प्रकृति के मध्य सामंजस्य और संतुलन** हो। भारत की प्राचीन परंपरा में प्रकृति को देवत्व का रूप दिया गया है – उसे 'माता' कहा गया है। "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" (ऋग्वेद) यह उद्घोषणा इस तथ्य को दर्शाती है कि मनुष्य और पृथ्वी के बीच का संबंध उपयोगकर्ता और उपभोग की वस्तु का नहीं, बल्कि माता और संतान का है। इसी कारण भारतीय संस्कृति में नदियाँ "गंगा माता", "यमुना जी" और वनों को "वनदेवी"

कहा जाता है। भारतीय दर्शन में "पंचमहाभूत" – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश – को सृष्टि के मूल तत्व माना गया है। इनका संतुलन ही जीवन का आधार है। जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो प्राकृतिक आपदाएँ और पर्यावरणीय संकट उत्पन्न होते हैं। अतः भारतीय दृष्टिकोण में मानव का कर्तव्य केवल विकास करना नहीं, बल्कि **प्रकृति का संरक्षण करना भी है।** यही कारण है कि भारतीय जीवनदर्शन में "संयम" और "संतुलन" को सर्वोच्च स्थान दिया गया है।

संयुक्त राष्ट्र की ब्रंटलैंड रिपोर्ट (Brundtland Commission, 1987) में सतत विकास को परिभाषित करते हुए कहा गया –

"वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार की जाए कि भविष्य की पीढ़ियाँ भी अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।"

यह परिभाषा भारतीय चिंतन से पूर्णतः मेल खाती है। भारतीय दृष्टि में वर्तमान और भविष्य के बीच कोई संघर्ष नहीं, बल्कि निरंतरता है। यदि हम आज के संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करें, तो भविष्य की पीढ़ियाँ भी समृद्ध रहेंगी। "वसुधैव कुटुम्बकम्" का भाव इसी एकात्म दृष्टि का प्रतीक है – जहाँ संपूर्ण विश्व, सभी जीव-जंतु और पर्यावरण एक ही परिवार का अंग हैं।

इस प्रकार, आधुनिक वैज्ञानिक परिभाषा और भारतीय आध्यात्मिक दृष्टि दोनों ही सतत विकास के एक ही मूल सत्य की ओर संकेत करती हैं – **विकास तभी सार्थक है जब वह प्रकृति, समाज और मानवता के बीच संतुलन स्थापित करे।** भारतीय चिंतन हमें यह स्मरण कराता है कि प्रकृति का दोहन नहीं, उसका पोषण करना ही हमारा वास्तविक धर्म है। इस दृष्टि से भारत की पारंपरिक पर्यावरणीय चेतना आधुनिक सतत विकास की भावना से कहीं अधिक व्यापक, मानवीय और दूरदर्शी है।

सतत विकास की अवधारणा और भारतीय दृष्टिकोण

संयुक्त राष्ट्र की ब्रंटलैंड रिपोर्ट (1987) के अनुसार, सतत विकास का मूल उद्देश्य है–

"वर्तमान आवश्यकताओं को इस प्रकार पूरा करना कि भविष्य की पीढ़ियाँ अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ न हों।"

भारतीय दर्शन में यह विचार हजारों वर्षों पहले ही प्रतिपादित हो चुका था। *"वसुधैव कुटुम्बकम्"* (संपूर्ण विश्व एक परिवार है) और *"सर्वे भवन्तु सुखिनः"* जैसे सिद्धांत इस संतुलित विकास के नैतिक आधार हैं (Sharma, 2018)।

भारतीय चिंतन में विकास का अर्थ है– व्यक्ति, समाज, और प्रकृति का समग्र कल्याण। यहाँ भौतिक, बौद्धिक, और आध्यात्मिक उन्नति तीनों एक साथ चलती हैं। यह दृष्टिकोण वर्तमान "ट्रिपल बॉटम लाइन" मॉडल – *People, Planet, Profit* – से कहीं अधिक समग्र है।

भारतीय मूल्य और सतत विकास

भारतीय दर्शन में निहित जीवन-मूल्य न केवल नैतिक मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, बल्कि सतत विकास की व्यावहारिक दिशा भी तय करते हैं।

1. अहिंसा और करुणा

महात्मा गांधी के अनुसार, "अहिंसा सबसे बड़ी शक्ति है जो मानवता के पास है" (गाँधी, 1927)। अहिंसा का अर्थ है किसी जीव या पर्यावरण को हानि न पहुँचाना। जब हम पर्यावरण को नष्ट करते हैं, तब हम अप्रत्यक्ष हिंसा करते हैं। अतः अहिंसा पर्यावरण संरक्षण की नैतिक नींव है।

2. अपरिग्रह (संयम)

पतंजलि योगसूत्र में अपरिग्रह का तात्पर्य है– जितनी आवश्यकता हो उतना ही ग्रहण करना। यह विचार आज के उपभोक्तावादी समाज में अत्यंत प्रासंगिक है (राधाकृष्णन, 2019)। संयम और संतुलन का यह सिद्धांत संसाधनों के न्यायसंगत और विवेकपूर्ण उपयोग की ओर प्रेरित करता है।

3. सह-अस्तित्व और समरसता

भारतीय संस्कृति "सर्वभूत हिताय" के सिद्धांत पर आधारित है। यह दृष्टि मानव-केंद्रित विकास के विपरीत प्रकृति-केंद्रित विकास की ओर संकेत करती है। हर जीव, हर वृक्ष, हर नदी को समान सम्मान देना ही सतत विकास का आधार है।

4. धर्म और कर्तव्य

"धर्मो रक्षति रक्षितः" – धर्म का पालन करने वाला स्वयं सुरक्षित रहता है। यहाँ धर्म का अर्थ नैतिक कर्तव्य है। पर्यावरणीय दृष्टि से यह संदेश देता है कि प्रकृति की रक्षा करना ही मनुष्य का धर्म है (टैगोर, 1922)।

भारतीय परंपरा में पर्यावरणीय नैतिकता

भारतीय शास्त्रों में पर्यावरणीय चेतना गहराई से निहित है।

वेदों और उपनिषदों में पर्यावरण दृष्टि

ऋग्वेद में पृथ्वी को "माता" कहा गया है – *"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"*। अथर्ववेद में लिखा है, "पृथ्वी हमें पोषित करे, हम पृथ्वी का सम्मान करें" (ऋग्वेद 1.164.33)। उपनिषदों में कहा गया है – *"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किं च जगत्यां जगत्"* – समस्त जगत में ईश्वर का वास है (ईशा उपनिषद, 1)। यह विचार प्रकृति के प्रति सम्मान और संरक्षण की भावना को प्रकट करता है।

लोक परंपराओं में पर्यावरण संरक्षण

भारतीय लोक संस्कृति में नदियों, वनों, पर्वतों, और पशुओं की पूजा की परंपरा रही है। वृक्षारोपण पर्व, नवरात्रि, गंगा दशहरा जैसे उत्सव प्राकृतिक संतुलन के प्रतीक हैं (जोशी, 2017)। ये परंपराएँ केवल धार्मिक नहीं, बल्कि पारिस्थितिक दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी रही हैं।

सतत विकास और आधुनिक चुनौतियाँ

21वीं सदी में भारत तीव्र आर्थिक प्रगति के मार्ग पर अग्रसर है, परंतु इस प्रगति के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण का संतुलन बनाए रखना एक अत्यंत महत्वपूर्ण आवश्यकता बन गया है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, जलवायु परिवर्तन और वनों की निरंतर कटाई ने प्राकृतिक संसाधनों पर गंभीर दबाव डाला है (नीति आयोग, 2020)। जल, वायु, मृदा और ऊर्जा स्रोतों के अंधाधुंध उपयोग से न केवल पारिस्थितिक असंतुलन उत्पन्न हुआ है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की आवश्यकताओं पर भी संकट मंडराने लगा है। ऐसे में भारत के लिए चुनौती यह है कि वह आर्थिक विकास की गति को बनाए रखते हुए पर्यावरणीय स्थिरता को भी समान महत्व दे, ताकि विकास टिकाऊ, न्यायपूर्ण और भविष्य उन्मुख हो। इन परिस्थितियों में भारतीय परंपरा और दार्शनिक दृष्टिकोण का सहारा लेना अत्यंत उपयुक्त प्रतीत होता है। भारतीय चिंतन सदा से यह सिखाता आया है कि प्रकृति हमारे अस्तित्व का अभिन्न अंग है, उसका संरक्षण ही हमारी समृद्धि का आधार है। अतः भारत को ऐसी नीतियाँ अपनानी होंगी, जो "**ग्रोथ विद ग्रीननेस**" – अर्थात विकास और हरित सोच – दोनों को साथ लेकर चलें। इस विचार का तात्पर्य है कि आर्थिक प्रगति प्रकृति के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं, बल्कि सहअस्तित्व के भाव से आगे बढ़े। इसी दिशा में भारत सरकार ने कई महत्वपूर्ण पहलें की हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा आरंभ किया गया **"Lifestyle for Environment (LiFE)"** अभियान इस संदर्भ में एक प्रेरणादायक उदाहरण है (UNEP, 2022)। यह पहल इस विचार पर आधारित है कि पर्यावरण संरक्षण केवल नीतिगत विषय न होकर लोगों की दैनिक जीवनशैली का हिस्सा बने। यह नागरिकों को पर्यावरण-संवेदनशील व्यवहार अपनाने के लिए प्रेरित करता है, जिसमें संसाधनों का संयमित उपयोग, अपशिष्ट में कमी, पुनः उपयोग और पुनर्चक्रण की आदतें

शामिल हैं। "LiFE" अभियान का मुख्य उद्देश्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण के प्रति उत्तरदायी जीवन जीए और विकास के साथ-साथ प्रकृति की रक्षा को भी प्राथमिकता दे। यह आंदोलन जनभागीदारी के माध्यम से समाज में पर्यावरणीय चेतना को गहराई तक स्थापित करने का प्रयास करता है।

स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि 21वीं सदी का भारत तभी वास्तविक रूप से प्रगतिशील बन पाएगा जब उसकी आर्थिक योजनाओं में पर्यावरणीय संतुलन, स्थायी उपभोग और हरित तकनीकों का समावेश होगा। "ग्रोथ विद ग्रीननेस" और "LiFE" जैसी पहलें भारतीय संस्कृति के उन मूल्यों को पुनर्जीवित करती हैं, जिनका आधार संयम, सहअस्तित्व और प्रकृति के प्रति आदर है। यही दृष्टिकोण भारत को एक ऐसे भविष्य की ओर ले जाएगा, जहाँ आर्थिक समृद्धि और पर्यावरणीय स्थिरता साथ-साथ चलेंगी।

शिक्षा और नीतिगत दृष्टिकोण

सतत विकास की प्राप्ति के लिए **शिक्षा** सबसे प्रभावशाली और परिवर्तनकारी साधन मानी जाती है। शिक्षा न केवल ज्ञान का संचार करती है, बल्कि व्यक्ति के सोचने के तरीके, व्यवहार और मूल्यबोध को भी आकार देती है। यदि विद्यार्थियों को प्रारंभिक अवस्था से ही पर्यावरण के प्रति संवेदनशील और जिम्मेदार बनाया जाए, तो वे भविष्य में एक ऐसी समाजव्यवस्था का निर्माण कर सकते हैं जो पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक समानता दोनों को महत्व दे।

भारत की **नई शिक्षा नीति 2020 (National Education Policy 2020)** इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण पहल है, जिसमें "**पर्यावरणीय जागरूकता**" और "**स्थायी जीवनशैली**" को शिक्षा प्रणाली का अनिवार्य हिस्सा बनाया गया है (शिक्षा मंत्रालय, 2020)। इस नीति का उद्देश्य केवल अकादमिक उत्कृष्टता नहीं, बल्कि विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति उत्तरदायित्व और स्थायी जीवन के मूल्यों को विकसित करना है। यह शिक्षा को परीक्षा-केंद्रित दृष्टिकोण से हटाकर जीवन-केंद्रित और मूल्य-आधारित बनाती है, जिससे विद्यार्थी ज्ञान के साथ-साथ व्यवहारिक समझ भी प्राप्त करते हैं। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में अब **पर्यावरण शिक्षा**, **वृक्षारोपण**, **पुनर्चक्रण**, और **स्थानीय पारिस्थितिकी** के अध्ययन पर विशेष बल दिया जा रहा है। देश के कई शिक्षण संस्थानों में "ग्रीन कैंपस", "ईको-क्लब" और "सस्टेनेबिलिटी प्रोजेक्ट्स" जैसे कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं, जो विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण के व्यावहारिक प्रयासों से जोड़ते हैं। इससे छात्रों में पर्यावरणीय चेतना विकसित होती है और वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पर्यावरण-मित्र दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित होते हैं।

इस प्रकार, भारतीय शिक्षा नीति आज **संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों (Sustainable Development Goals - SDGs)** — विशेषकर लक्ष्य संख्या 4 (गुणवत्तापूर्ण शिक्षा) और लक्ष्य संख्या 13 (जलवायु कार्यवाही) —

की भावना के अनुरूप है। यह नीति न केवल पर्यावरणीय शिक्षा को प्रोत्साहित करती है, बल्कि ऐसे उत्तरदायी नागरिकों का निर्माण करती है जो आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करने में सक्षम हों।

अतः कहा जा सकता है कि **शिक्षा सतत विकास का सबसे मजबूत आधारस्तंभ है।** जब शिक्षा में पर्यावरणीय चेतना, नैतिकता और सतत जीवनशैली के मूल्य निहित होंगे, तब समाज वास्तविक अर्थों में एक संतुलित, समृद्ध और सतत भविष्य की ओर अग्रसर हो सकेगा।

भारतीय चिंतन की वैश्विक प्रासंगिकता

वर्तमान समय में जब संपूर्ण विश्व जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों की घटती उपलब्धता, बढ़ती असमानता और पर्यावरणीय संकट जैसी गम्भीर चुनौतियों से गुजर रहा है, तब भारतीय दर्शन मानवता के लिए एक संतुलित और नैतिक समाधान प्रस्तुत करता है। आधुनिक युग में तकनीकी प्रगति और औद्योगिक विकास ने जहाँ जीवन को सुविधाजनक बनाया है, वहीं उसने प्रकृति के साथ असंतुलन भी उत्पन्न किया है। इस असंतुलन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि केवल आर्थिक वृद्धि को विकास नहीं कहा जा सकता; बल्कि विकास वह है जो प्रकृति, समाज और मानवता के बीच सामंजस्य स्थापित करे। इस संदर्भ में भारतीय दर्शन का "**वसुधैव कुटुम्बकम्**" सिद्धांत एक सार्वभौमिक दृष्टिकोण प्रदान करता है, जो सम्पूर्ण पृथ्वी को एक परिवार के रूप में देखता है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" केवल एक आदर्श वाक्य नहीं, बल्कि जीवन जीने की भारतीय पद्धति का दार्शनिक आधार है। यह विचार सभी सीमाओं और भेदों से ऊपर उठकर मानवता की एकता और करुणा का संदेश देता है। जब हम पृथ्वी को एक परिवार मानते हैं, तो उसके प्रत्येक जीव, वृक्ष, नदी और पर्वत के प्रति हमारी जिम्मेदारी बढ़ जाती है। यह सोच सतत विकास की उस भावना से जुड़ी है जिसमें वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार की जाती है कि भविष्य की पीढ़ियों का अस्तित्व और संतुलन सुरक्षित रहे।

भारतीय चिंतन में निहित मूल्य जैसे **अहिंसा, अपरिग्रह** और **समरसता** सतत विकास के नैतिक स्तंभ बन सकते हैं।

- **अहिंसा** हमें सिखाती है कि हम किसी भी जीव या पर्यावरण को हानि पहुँचाए बिना जीवन जीएँ – यह जलवायु न्याय और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व का मूल है।
- **अपरिग्रह** सीमित उपभोग का भाव जगाता है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण और न्यायसंगत उपयोग सुनिश्चित होता है।

- **समरसता** सामाजिक और आर्थिक समानता की दिशा में मार्गदर्शन करती है, जिससे हर व्यक्ति को समान अवसर और गरिमा प्राप्त हो सके।

संयुक्त राष्ट्र के **सतत विकास लक्ष्य (SDGs 2030)** भी इन्हीं सिद्धांतों से प्रेरित हैं। गरीबी उन्मूलन, पर्यावरण संरक्षण, लैंगिक समानता, जलवायु कार्यवाही और स्वच्छ ऊर्जा जैसे लक्ष्य भारतीय मूल्यों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ते हैं। भारत का दृष्टिकोण यहाँ "**समग्र विकास**" का है – जिसमें भौतिक प्रगति के साथ-साथ नैतिकता, अध्यात्म और संतुलित जीवनशैली का समावेश हो। अतः यह कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति और दर्शन विश्व के लिए एक नई विकास दिशा प्रस्तुत कर सकते हैं – ऐसी दिशा जहाँ विज्ञान और अध्यात्म, उपभोग और संयम, प्रगति और करुणा साथ-साथ चलें। जब विकास के साथ नैतिकता और सह-अस्तित्व का भाव जोड़ा जाएगा, तभी धरती वास्तव में स्थायी, शांतिपूर्ण और समृद्ध भविष्य की ओर अग्रसर होगी। "वसुधैव कुटुम्बकम्" का यह सिद्धांत वैश्विक एकता, सहयोग और साझा उत्तरदायित्व की उस भावना का प्रतीक है जो सतत विकास के सच्चे अर्थ को परिभाषित करती है।

निष्कर्ष

भारतीय चिंतन के परिप्रेक्ष्य में **सतत विकास** केवल आर्थिक प्रगति का पर्याय नहीं, बल्कि एक समग्र और संतुलित जीवन दृष्टि का प्रतीक है। इसका उद्देश्य ऐसा विकास स्थापित करना है, जिसमें **मानव, समाज और प्रकृति** तीनों के बीच सामंजस्य और सह-अस्तित्व बना रहे। भारतीय दर्शन सदा से यह सिखाता आया है कि मनुष्य और प्रकृति के बीच कोई भेद नहीं है – दोनों एक ही ब्रह्मांडीय सत्ता के अंग हैं। इसलिए, जब तक विकास प्रकृति के साथ सामंजस्य में नहीं होगा, तब तक वह अधूरा और अस्थायी रहेगा। सच्चा विकास वह है, जो केवल भौतिक संपन्नता तक सीमित न रहकर नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति को भी शामिल करे। यदि आर्थिक प्रगति पर्यावरण के विनाश और नैतिक मूल्यों के ह्रास की कीमत पर हो, तो वह विकास नहीं, बल्कि विनाश का मार्ग बन जाती है। भारतीय चिंतन इसीलिए **"संयम", "अहिंसा"**, और **"सह-अस्तित्व"** को जीवन का आधार मानता है। अहिंसा केवल शारीरिक हिंसा से बचने का सिद्धांत नहीं, बल्कि हर जीव और प्रकृति के प्रति करुणा और संवेदना का प्रतीक है। संयम संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग की प्रेरणा देता है, जबकि सह-अस्तित्व हमें सिखाता है कि सभी प्राणी और तत्व एक ही जीवन चक्र के हिस्से हैं। इन सिद्धांतों का पालन आज के पर्यावरणीय संकट का स्थायी समाधान प्रस्तुत कर सकता है। जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, प्रदूषण और असमानता जैसी समस्याएँ केवल तकनीकी उपायों से नहीं, बल्कि मूल्य-आधारित जीवनशैली से ही सुलझाई जा सकती हैं। भारतीय दर्शन इसी मूल्य-आधारित सोच की नींव रखता है। यदि विश्व भारतीय चिंतन के इन सार्वभौमिक सिद्धांतों – **अहिंसा, संयम, धर्म, और सह-अस्तित्व** – को अपनाए, तो विकास का मार्ग केवल समृद्धि तक सीमित नहीं

रहेगा, बल्कि **शांति, समरसता और संतुलन** की दिशा में अग्रसर होगा। यही है वह सच्चा सतत विकास, जिसकी झलक भारतीय उपनिषदों के इस शाश्वत संदेश में मिलती है –

"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।" यह वाक्य न केवल मानवीय करुणा का प्रतीक है, बल्कि सतत विकास का वास्तविक दर्शन भी प्रस्तुत करता है।

संदर्भ

- ब्रंटलैंड आयोग।) 1987)। आवर कॉमन फ्यूचर। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- गाँधी, एम .के) .1927)। सत्य के साथ मेरे प्रयोग :आत्मकथा। नवजीवन प्रकाशन।
- राधाकृष्णन, एस) .2019)। भारतीय दर्शन और मानवीय मूल्य। नई दिल्ली :ओरिएंट ब्लैकस्वान।
- जोशी, आर) .2017)। भारतीय पारिस्थितिक परंपराएँ और पर्यावरणीय नैतिकता। नई दिल्ली : डी.के .पब्लिशर्स।
- नीति आयोग।) 2020)। भारत का सतत विकास लक्ष्यों पर स्वैच्छिक राष्ट्रीय समीक्षा रिपोर्ट। नई दिल्ली :भारत सरकार।
- शिक्षा मंत्रालय।) 2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020। नई दिल्ली :भारत सरकार।
- यूनेस्को।) 2015)। सतत विकास लक्ष्यों के लिए शिक्षा :अधिगम उद्देश्यों का दस्तावेज़। पेरिस : यूनेस्को प्रकाशन।
- यूएनईपी।) 2022)। पर्यावरण के लिए जीवनशैली) LiFE) पहल। नैरोबी :संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम।
- शर्मा, ए) .2018)। भारतीय चिंतन में पर्यावरणीय नैतिकता। भारतीय अध्ययन पत्रिका, 12(2), 45–58।
- टैगोर, र) .1922)। क्रिएटिव यूनिटी। लंदन :मैकमिलन।
- वर्मा, आर) .2015)। भारतीय संस्कृति और सतत विकास की अवधारणा। नई दिल्ली :ज्ञानदीप पब्लिशिंग हाउस।

- मिश्रा, पी) .2016)। भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण और पर्यावरणीय संतुलन। वाराणसी :भारतीय विद्या संस्थान।
- त्रिपाठी, एस) .2018)। गांधीवादी विचार और पर्यावरणीय नैतिकता। समाज और विकास जर्नल, 14(3), 89–102।
- पांडेय, डी) .2021)। सतत विकास और भारतीय मूल्य प्रणाली :एक विश्लेषणात्मक अध्ययन। नई दिल्ली :अटल प्रकाशन।
- सिंह, ए) .2019)। पर्यावरण शिक्षा और सतत विकास में शिक्षा की भूमिका। भारतीय शिक्षाशास्त्र परिषद् जर्नल, 17(4), 66–80।